भजन सुमिरन का तरीक़ा

मन में तरंगें उठें तो सुमिरन व भजन करना चाहिए . सुरत को तीसरे तिल में समेटें . दोनों आँखों की रौशनी जहाँ मिलती है , वही ध्यान करना चाहिए. वहां ध्यान ज़माने से प्रकाश नज़र आएगा. शब्द भी वहीं सुनाई देगा परन्तु उसे अन्तर में सुनना चाहिए. गुरु का ध्यान करना स्थूल , व शब्द का सुनना अथवा प्रकाश का देखना सूक्ष्म है. गुरु का ध्यान करते-करते जब प्रकाश दिखाई देने लगे, अथवा जब शब्द सुनाई पड़ने लगे तो फिर ध्यान को छोड़कर उसी अभ्यास को करने लगना चाहिए.

अगर प्रकाश देखने या शब्द सुनने के साथ-साथ गुरु का ध्यान भी करते रहें तो चित्त ठिकाने नहीं रहेगा और दोनों में से कोई भी नहीं हो सकेगा. नियमित ढंग से साधन में जब पुष्टता आएगी तभी शब्द और ध्यान दोनों चल सकते हैं. तस्बीर को सामने रख कर या किसी मूर्ति आदि पर ध्यान नहीं करना चाहिए. अगर गुरु सामने मौजूद हों तो भी उनकी ख्याली शक्ल का ही ध्यान करना चाहिए , हांलाकि यह ख्याली शक्ल का ध्यान भी स्थूल ही माना जाता है, पर शुरू-शुरू में अभ्यासियों को ऐसा करना कठिन होगा. चूंकि आत्मा के केंद्र में ही परमात्मा है अतः उनका अनुभव हांसिल करने के लिए ऐसी हालत पर आना है जहाँ कोई ख्याल न हो.

ध्यान अन्तर में होवे , इसके लिए यह आवश्यक है की हमारी सुरत (attentioin) जो अभी बाहरी पदार्थों में लगी हुई है - वहां से हटे और सिमट कर अन्तर में लौटे. मन की धार यानी संकल्प-विकल्प जब तक शांत नहीं होंगे तब तक ध्यान पक्का नहीं हो सकता . मन काल का अंश है . यह सुरत को दुनियांवी पदार्थों की तरफ खींचता और बिखेरता रहता है. मन दुनियां में सबसे अधिक तीव्र गति वाला और महा चंचल है, कभी शांत नहीं रह सकता. इसकी मिसाल शांत-प्रशांत तालाब के जल से दी गयी है. जैसे प्रशांत जल में हवा चलने से या हलकी से हलकी चीज़ फेंकने पर छोटी-छोटी तरंगें उठने लगती हैं वैसे ही इन्द्रियों के प्रभाव से या शरीर के ज़रा से हिलने मात्र से मन में संकल्प-विकल्प उठने शुरू हो जाते हैं.

योग, यज्ञ , तप, तीर्थ, व्रत, नियम, पूजा इत्यादि जो कुछ भी साधन किये जाते हैं , पहले पहल सब मन को शांत करने के लिए ही किये जाते हैं. इन तरंगों की रोक-थाम सुमिरन व भजन से की जाती है. इसमें भींचा-भीची करनी पड़ती है. मन को वासनाओं से हटाना भींचा-भीची कहलाती है. इसके लिए सन्त लोग कम खाना,कम सोना, कम बोलना , एकांत सेवन और ज़्यादातर समय ध्यान में मशगूल (रत) रहने की सलाह देते हैं.

सुख प्राप्ति से मन मोटा होता है. सुख, साधन में महा बाधक होता है. परमात्मा की याद दुःख में ही आती है. इसीलिए दुखों को परमारमा की नियामत समझा जाता है. कहा भी है –

सुख के माथे सिल परें , जो नाम हिये से जाय

बलिहारी वा दुःख की , जो पल-पल नाम रटाय .

मन व माया को कमज़ोर करने के लिए अपने आप को दीन समझें. जब तक दीनता नहीं आती, तब तक आपा नहीं मिटता . आपा मिटे वगैर आत्मा का साक्षात्कार नहीं हो सकता और आत्मानुभव के बिना उद्धार नहीं होता है. स्वार्थ और परमार्थ साथ-साथ नहीं रह सकते .केवल एक ही रह सकेगा . खुदा को पाने के लिए खुदी को निर्मूल करना पड़ेगा और वह तभी होगा जब दुनिया से सच्चा वैराग और गुरु चरणों में अनुराग होगा . वैराग का यह मतलब कभी नहीं कि घर-बार , स्त्री, परिवार आदि को छोड़ कर जंगल में चला जाए. जंगल में जाने से भी भला वैराग हो सकता है? शरीर और मन तो वहां भी मौजूद रहेंगे . और जब ये रहेंगे तो इनके व्यवहार भी करने पड़ेंगे,

सच्चे मायने में वैराग का अर्थ वीतराग होना है, यानी किसी चीज़ में राग (आसक्ति) न हो. शरीर से सब कुछ भोगता हुआ भी किसी चीज़ से लगाव न रहे और न कहीं अटकाव हो. चरणों में अनुराग से मतलब है कि हर समय अपने को , अपनी सुरत को परमात्मा के चरणों में लगाए रखें और उसकी मौज़ में अपने को ले करदें . इस रास्ते में अनेकों कठिनाइयां आएंगी , परन्तु उनसे घबराएं नहीं , धैर्य पूर्वक गुरु में पूर्ण प्रीति और प्रतीत के साथ उनका बताया हुआ साधन करते जाएँ. कामयाबी अवश्य मिलेगी.

==========